रोगोपचार में गृहशांति एवं धार्मिक उपायों का योगदान

डा० ज्ञानचन्द्र जैन

रीडर, शासकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, लखनऊ

इस अनादिनिधन सृष्टिचक्र में प्राणिमात्र सदैव से पण्डित दौलतराम के अनुसार, दुःख से भयभीत होकर सुख प्राप्ति की अभिलाषा हेतु निरन्तर प्रयास करता आ रहा है। जीव की इस दुःख-कातरता को देखकर हमारे करुणा-निधान निर्ग्रन्थ गुरु-प्रवरों ने भी उसे सुखकर मार्ग का दिशा निर्देश किया है। अनन्त-सुखागार मोक्ष प्राप्ति हेतु भी धर्म साधना के लिये शरीर धारणार्थ आहार लेना अनिवार्य आवश्यकता है। यही आहार रोगोत्पत्ति में भी कारण होता है। इसी से साधना में बाधा पड़ती है। इसलिये धर्म-साधना में सहायक शरीर को स्वस्थ रखने के लिये आचार्यों ने दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं ऋतुचर्या के अनुसार आहार-विहार का पालन करते हुए पथ्यापथ्य-पूर्वक रहने का भी उपदेश किया है। यदि व्यक्ति कदाचित अस्वस्थ भी हो जावे, तो औषधि के साथ ही पथ्य व्यवस्था पूर्वक शीघ्र स्वस्थ हो सके। अपथ्याहार से स्वास्थ्य-लाभ न हो पाने से जीव अभीष्ट सिद्धि नहीं कर पायगा। हमारे आचार्यों ने तात्विक दृष्टि से गम्भीर चिन्तन करते हुए सुखप्राप्ति हेतु ग्रहण की अपेक्षा त्याग या दान को अत्यधिक महत्व दिया है। दोनों में भी धर्म-साधना-सहायक स्वास्थ्य के लिये औषध दान को श्रेष्ठ बताया है। इन्द्रिय सुख-रसी जीव की प्रवृत्ति के विषय में गुरु प्रवर सम्यक्-रीत्या यह जानते थे कि कितना भी समझाने पर कर्म बन्धाधीन यह जीव विषयसुख के आकर्षण में फँसकर अपना अहित करता रहेगा। वस्तुतः विवेक बुद्धि तो कठिन साधना तथा सद्गुरु कृपा से ही व्यक्ति को प्राप्त होती है। यही कल्याण पथ में अग्रसर होने में सहायक होती है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हमें स्पष्टतया गोचर हो रहा है कि आज का मानव बुद्धि एवं धर्मशून्य आचरण कर नाना प्रकार की व्याधियों को आमन्त्रित कर सदैव दुःखी बना रहता है। अवस्था एवं परिस्थिति के अनुसार आचार्यों ने चिकित्सा-सौकर्यार्थ व्याधियाँ चार प्रकार की मानी हैं : सुखसाध्य, कष्टसाध्य, याप्य तथा असाध्य। इनमें सबसे महत्व-पूर्ण व्याधि 'श्वास रोग' की चिकित्सा का विवेचन यहाँ अपेक्षित है। हम क्षण-क्षण यह प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं कि यदि हमें थोड़े समय के लिये भी वायु उपलब्ध न हो, तो श्वासावराध के कारण दम घुटने लगता है और हमारी मृत्यु हो सकती है। इसलिये जीवन धारण के लिये वायु अत्यन्त आवश्यक तत्व है। यह तत्व हमें श्वास क्रिया द्वारा प्राप्त होता है। श्वास क्रिया की विकृति ही 'श्वास व्याधि' की जनक है। इस व्याधि के महाश्वास, ऊर्ध्वश्वास, छिन्नश्वास, तमक-श्वास तथा क्षुद्रश्वास नामक पाँच भेद हैं। इनमें प्रथम तीन असाध्य होने के कारण अ-चिकित्स्य हैं। क्षुद्रश्वास श्रमजन्य होने से चिकित्सा द्वारा सुगमता से ठीक हो जाती है। तमक श्वास याप्य होने से रोगी और चिकित्सक—दोनों के लिये महत्व की है। याप्य व्याधि का शमन चिकित्सा एवं पथ्य—दोनों पर निर्भर करता है। कभी-कभी चिकित्सा से लाभ होने पर रोगी अपने को स्वस्थ मान लेता है और पुनः अपथ्य सेवन करने लगता है। इससे रोग बिगड़ जाता है और 'दमा दम के साथ जाता है' जैसी कहावत चरितार्थ होने लगती है। इसलिये श्वास रोग का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(अ) **संप्राप्ति :** यह कफ-वातात्मक दुर्जर महाव्याधि है। इसका उद्भव आमाशय या पित्त स्थान से होता है। इसकी अभिव्यक्ति प्राणवह स्रोतस फुप्फुस-स्थित श्वास नलिका द्वारा होती है। रोगी द्वारा अधिक मात्रा में पर्याप्त समय तक अम्ल-लवणात्मक शीत-स्निग्ध-गुरु-पिच्छिल गुणी आहार ग्रहण करने से उसका सम्यक् परिपाक नहीं हो पाता। अपरिपक्व आहार-रस से आमदोष की उत्पत्ति होती है। इससे अग्नि मन्दता होती है जिससे विकृत कफ उत्पन्न होता है। यही विकृत कफ अपक्व रसों के साथ शरीर तन्त्र में संवहन और परिभ्रमण करता हुआ फुप्फुस में आता है और श्वास-नलिका में विकृत या मलकफ के रूप में एकत्र होकर श्वास क्रिया का अवरोध कर प्राणवह स्रोतस में स्रोतोरोध के द्वारा श्वास रोग की उत्पत्ति करता है। श्वास न ले पाने से दम फूलने लगता है, घबराहट होती है, कासवेग आने लगते हैं। अधिक समय तक श्वासरोध के कारण आँखों के आगे अन्धेरा छाने लगता है तथा प्राण संकट की सम्भावना प्रतीत होने लगती है। खाँसते-खाँसते यदि प्रयत्न पूर्वक थोड़ा-सा भी कफ निकल जाता है तो किंचित् लल एवं सुख की अनुभूति होती है। कुछ समय पश्चात् श्वास कष्ट की प्रक्रिया पुनः प्रारम्भ हो जाती है।

आधुनिक चिकित्सक यह मानते हैं कि कफ निकाल देने से रोगी ठीक हो जायेगा। इसलिये श्वास रोग में कफ निःसारक, श्वास नलिका विस्फारक या कफशामक औषधियों का आवश्यकतानुसार उपयोग कर वे रोगी को स्थायी लाभ पहुँचा देते हैं। पर इस चिकित्सा विधि से रोगोन्मूलन नहीं हो पाता। इसका कारण यह है कि उत्पादित कफ तो चिकित्सा द्वारा निकल जाता है परन्तु कफोत्पादन की प्रक्रिया की चिकित्सा तो होती ही नहीं है। इसलिये रोग और कष्ट—दोनों ही बने रहते हैं। यह स्थिति ठीक उसी प्रकार की है जैसे वृक्ष की शाखा या पत्र तो काट दिये, पर जड़ नहीं काटी। फलतः वह समुचित पोषण मिलने पर अंकुरित एवं पल्लवित होने लगता है।

इस समस्या को दृष्टिगत रखते हुए रोग की शमन और संशोधन—दो प्रकार की चिकित्सा का विधान किया है। उपरोक्त चिकित्सा विधि शमनात्मक है। संशोधन चिकित्सा द्वारा दोषोन्मूलन होकर पुनः व्याधि की सम्भावना नहीं रहती। इस विधि में वमन चिकित्सा विधि द्वारा आमाशय के विकृत कफ की उत्पादन प्रक्रिया का उन्मूलन किया जाता है। इससे इस दुर्जर व्याधि से छुटकारा पाया जा सकता है। रोगियों की चिकित्सा के समय कभी-कभी ऐसी स्थिति भी परिलक्षित होने लगती है कि अनेक रोगियों को लाभ होने के बावजूद भी, अनेकों को लाभ नहीं हो पाता। ऐसी परिस्थितियों में मन में इस प्रकार के विचार आने लगते हैं कि योग्य निदान एवं चिकित्सा के पश्चात् भी कुछ ऐसे विचार बिन्दु हैं जिनसे सफल चिकित्सा की अधिक संभावना प्रतीत होती हैं। ऐसे विषयों में चिकित्सा की अंगभूत आथर्वणी या ज्योतिष चिकित्सा विधि महत्वपूर्ण है। इस विधि में ग्रह प्रभाव-शांत करने के उपाय तथा कर्म-विपाक शमन रूप धार्मिक पक्ष की विधियाँ महत्वपूर्ण हैं।

श्वास रोग के अनेक रोगियों की चिकित्सा के समय उपरोक्त परिस्थियाँ उत्पन्न हुई हैं। इनमें उक्त सहयोगी चिकित्सा विधियों के सहयोग से चिकित्सा करने पर अनुकूल परिणाम भी परिलक्षित हुए हैं। इनमें से ही एक श्वास रोगी की चिकित्सा विधि का उल्लेख प्रस्तुत करना उपयोगी होगा।

कन्हैया लाल नामक एक रोगी १९७७ से श्वास रोग से पीड़ित था। चिकित्सा कराते रहने पर उसे लाभ रहता है पर कालान्तर में वह पुनः व्याधिग्रस्त हो जाता है। रोगी को श्वास-कृच्छता रहती है, कभी-कभी दम घुटने जैसी स्थिति पैदा हो जाती है। अधिक खाँसने पर कुछ कफ निकल जाने के बाद अल्पकालिक किंचित् सुखानुभूति होती है। उसकी अन्य स्थितियाँ भी प्रचण्ड श्वास रोग को निरूपित करती हैं। कभी-कभी वह मूर्छित भी हो जाता है। इन सब आधारों पर उसके तमक श्वास होने का निदान किया गया। एक्स-किरण परीक्षा में भी फुप्फुस स्थित श्वास नलिका शोथ पाया गया। श्रवण-परीक्षा में फुप्फुस एवं श्वास नली में घुर्घुरक ध्वनि पाई गई जो कफ बाहुल्य एवं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्रोतों-रोध का प्रतीक है। रोगी के अन्य लक्षणों में ज्वरानुबंध, अग्निमन्दता, अरुचि, अशक्ति आदि पाये गये। इनके कारण रोगी के तमकश्वास के रोगनिदान में सहायता मिली।

इस रोगी की चिकित्सा में प्रतिदिन प्रातः, सायं एवं मध्यान्ह मधु के साथ निम्न मिश्रण लेने के लिये प्रयोग किया गया :

(i) श्वासकास चिन्तामणि रस	१ डेग्रा०
लक्ष्मी विलास रस	४ डेग्रा०
श्वास कुठार रस	४ डेग्रा०
सोम चूर्ण	१ ग्राम
प्रबाल पंचामृत रस	२ डेग्रा०
सितोपलादि चूर्ण	२ ग्राम

(ब) प्रातः एवं सायं दूध के साथ १० ग्राम वासावलेह लेने के लिये कहा गया।

(स) प्रातः एवं सायं १०० मिलो० श्वासवासांतक क्वाथ लेने के लिये कहा गया।

(द) भोजनपूर्व प्रतिदिन जल के साथ २×२ अग्नितुंडी बटी का उपयोग किया गया।

(य) भोजनोत्तर प्रतिदिन जल के साथ २० मिली० द्राक्षारिष्ट एवं २० मिली० अश्वगंधारिष्ट का प्रयोग किया गया।

(र) कुछ अंग्रेजी दवाइयों का भी उपयोग किया गया :

(१) टर्बुटेलीन टेबलेट, 500 mg, दिन में तीन बार

(२) एमोक्सिलीन केपसूल, ,, दिन में चार बार

(३) बेनाड्रिल कफ एक्स्पेक्टोरेन्ट सिरप, २ चम्मच, चार बार

इस चिकित्सा व्यवस्था से रोगी को शीघ्र लाभ होने लगा। रोगी और रोग की स्थिति का आवश्यकतानुसार परीक्षण करते हुए चिकित्सा व्यवस्था में समुचित परिवर्तन किये जाते रहे। यह चिकित्सा लगभग तीन माह तक चलती रही। इससे आशानुकूल लाभ होते हुए भी रोगोन्मूलन हेतु पूर्ण सफलता में न्यूनता परिलक्षित हुई। इस पर विचार करने पर चिकित्सा के अंगभूत ज्योतिष शास्त्र के अनुसार रोगी के निम्न जन्मांग का अध्ययन किया गया।

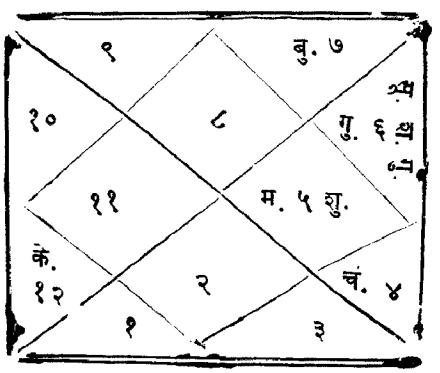

जन्म तिथि, समय व स्थान

आश्विन कृष्ण ११ मंगलवार, विक्रम १९७८

८-४० प्रातः

होशियारपुर, पंजाब।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्योतिष के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'जातक तत्व' के अनुसार, यदि मंगल और शनि ग्रह जन्म लग्न को देखते हों, तो श्वास व क्षय की व्याधि होती है। प्रस्तुत जन्मांग में लग्न मंगल से चतुर्थ होने से तथा शनि से तृतीय होकर पूर्ण पृष्ट होने से श्वास रोग की पुष्टि होती है। साथ ही, कन्या राशि में गुरु होने पर फुफ्फुस-अवरोध-जन्य विकार तथा क्षय रोग होता है। पाश्चात्य ज्योतिषी रोफीरियल के अनुसार भी, कन्याराशि में गुरु तथा तुला राशि में बुध होने पर फुफ्फुसावरोधजन्य श्वास-रोग होता है।

इस जन्मांग में फुफ्फुसांग संबंधी तृतीयभाव को राशि-मकर-का स्वामी शनि भावेश होकर स्वयं ही क्रूर ग्रह है तथा क्रूर ग्रह सूर्य से युक्त भी है, यह पापी ग्रह राहु से भी युक्त है तथा केतु से सप्तम होने से पूर्ण दृष्ट है। ये सभी लक्षण व्याधि की उग्रता के द्योतक हैं। ज्योतिष विज्ञान के अनुसार, ऐसी स्थिति में ग्रहों की दृष्टि की कोटि के अनुसार, व्याधि उग्र, मध्यम, मंद या मृदु कोटि की हो सकती है। ग्रहशांति के उपायों द्वारा मृदु, मद और मध्यम कोटि की व्याधि को ठीक किया जा सकता है। परन्तु उग्र या दारुण रोग को मन्द रूप में तो परिवर्तित किया जा सकता है किन्तु उसके पूर्णतः शमित होने की सम्भावना बलवती नहीं रहती। हाँ, ग्रह-प्रकोप की कालावधि व्यतीत होने पर व्याधि के स्वरूप में परिवर्तन होने लगता है। चिकित्सोपचार भी इसमें सहायक होता है। ग्रह-प्रकोप की उग्र स्थिति को 'मारकेश' कहा जाता है। यह अनिष्ट का सूचक होता है।

उपरोक्त रोगी का रोग उग्र अवस्था में होने से उक्त चिकित्सा के साथ ग्रहशान्ति के उपाय किये गये। इस हेतु ज्योतिष चिकित्सा ग्रंथ में वर्णित निम्न प्रकार मंत्रों के जाप किये गये :

(अ) मंगल ग्रहशान्ति हेतु :	ॐ आं अंगारकाय नमः	७००० जाप
(ब) बुध–शान्त्यर्थ	: ॐ बुं बुधाय नमः	१००० जाप
(स) गुरु–शान्त्यर्थ	: ॐ बृं वृहस्पत्तये नमः	१००० जाप
(द) शनि–ग्रहशान्ति हेतु :	ॐ शं शनैश्चराय नमः	२३००० जाप

इन जपों के अतिरिक्त धार्मिक शान्ति उपायों में जैन साहित्य में वर्णित कविवर मनसुखसागर-रचित 'नवग्रहारिष्ट विधान' के अनुसार (१) मंगल ग्रह शान्त्यर्थ मगल अरिष्ट निवारक श्री वासुपूज्य जिनपूजा, (२) बुध ग्रह शान्ति हेतु बुध-अरिष्ट निवारक श्री अष्टजिनपूजा, (३) गुरु ग्रह शान्त्यर्थ गुरु अरिष्ट निवारक श्री अष्टजिनपूजा तथा (४) शनि ग्रह शान्त्यर्थ शनि अरिष्ट निवारक श्री मुनिसुव्रत जिनपूजा का विधान किया गया।

चिकित्सा एवं ग्रहशान्ति के प्रयासों से रोग शमन हो गया, परन्तु ग्रहों की उग्रता के कारण रोगोन्मूलन नहीं हो पाया। भविष्य में उपचार करते रहने से पूर्ण लाभ हो जाने की सम्भावना है। इस प्रकार चिकित्सा एवं ज्योतिषीय विधियों के प्रयोग के संयुक्त प्रयासों से व्याधियों के उन्मूलनकी सम्भावना बलवती प्रतीत होती है। यदि मारकेश के कारण किन्हीं व्याधियों का उन्मूलन सम्भव न भी हो पाया, तो उनके मन्द या मृदु होने में तो कोई शंका ही नहीं है। कालान्तर में उनका शमन भी सम्भव है।

कुछ और प्रयोग : इसी आशा से एक सौ रोगियों के जन्मांगों में व्याधिजनक ग्रहयोगों की स्थिति प्रमाणित हो जाने पर एवं व्याधि का निदान यथाविधि कर लेने के पश्चात् भैषजोपचार के साथ ही 'वीरसिंहावलोक' तथा 'नवग्रहारिष्ट-निवारक विधान' में वर्णित मंत्र–जाप, पूजा तथा विधानों का अनुष्ठान कराया गया। इस उपचार के फलस्वरूप प्राप्त परिणामों को सारणी १ में दिया गया है। इनके प्रकाश में इस क्षेत्र में अधिक अध्ययन एवं अनुशीलन की प्रेरणा मिलती है और यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान चिकित्सा विज्ञान में अन्य विधियों के समान ज्योतिषी चिकित्सा भी एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारणी १ : ज्योतिष-चिकित्सीय प्रयोगों के परिणाम

रोग	रोगी संख्या	रोगोन्मूलन	रोग-शमन	कोई लाभ नहीं
१. श्वाँस रोगी	७	४, ५७%	३, ४२%	—
२. यक्ष्मा	८	—	७, ८७·५%	१, १२·५%
३. कुकुसावरण शोथ	१	१, १००%	—	—
४. जन्नवह स्रोत	७	४	३	—
५. रसवह स्रोत	१८	२	१५	१
६. मूत्रवह स्रोत	६	३	२	१
७. पुरीषवह स्रोत	९	८	१	—
८. रक्तवह स्रोत	१३	४	६	३
९. अर्न्तवह स्रोत	१८	३	१०	५
१०. मनोवह स्रोत	६	१	५	—
११. वातवह स्रोत	७	४	१	२
	१००	३४	५३	१३

●

साधारण जन की श्रद्धा और चिंतक की श्रद्धा में अंतर होता है। साधारणजन श्रद्धेय की प्रत्येक वाणी में श्रद्धा करता है। चिंतक श्रद्धेय की आध्यात्मिक उपलब्धि के प्रति श्रद्धानत होने पर भी उसके प्रत्येक वचन की श्रद्धा-स्वीकृति का आग्रह नहीं करता। सिद्धसेन ने बताया है कि भ० महावीर ने दो प्रकार के तत्व कहे—(१) हेतुगम्य और (२) अहेतुगम्य। जो व्यक्ति अहेतु-गम्य तत्वों को आगम की प्रमाणता से और हेतुगम्य तत्वों को तर्क की प्रमाणता से प्रतिपादित करता है, वह आगम के हार्द को यथार्थ समझता है। निर्युक्तिकार भद्रबाहु इसी मत के प्रस्तोता रहे हैं।

—मुनि नथमल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org